देववाणी ध्यान

उपासना यानी शांत होकर बैठ जाना। आसन मार दिया, बैठ गए। निमंत्रण दे दिया कि प्रभु तू आ! खींचतान नहीं की जा सकती। तुम उसका आंचल पकड़ कर उसे खींच नहीं सकते। मगर इतना ही हो जाए तो काफी है, अपने-आप आ जाता है। आना ही चाहता है। तुम जितने आतुर हो, तुमसे ज्यादा आतुर परमात्मा है तुमसे मिलने को। तुम्हारी आतुरता तो कुछ भी नहीं है। तुम्हारी आतुरता तो बस नाममात्र की आतुरता है—कामचलाऊ है, कुनकुनी आतुरता है। परमात्मा प्रतिपल आतुर है। सब तरफ से तुम्हें घेर लेना चाहता है, तुम्हें हृदय से लगा लेना चाहता है, मगर तुम मौका नहीं देते। और तुम्हें हृदय से भी लगा ले तो तुम छूट-छूट जाते हो।

सिर्फ अपने को शिथिल छोड़ो, शांत छोड़ो-कहीं भी! यह...ये पक्षी बोल रहे हैं, किसी वृक्ष के नीचे बैठकर शिथिल छोड़ दो। यह धूप तुम्हारे सिर पर पड़ती है, यह हवा का झोंका आता है, ये पक्षी बोलते हैं, ये सब परमात्मा का ही आगमन है, ये उसकी पगध्वनियां हैं, ये उसके ही इशारे हैं।

उपासना बड़ा प्यारा शब्द है। जापान में ज़ाज़ेन का जो अर्थ है, वही उपासना का अर्थ है, ज़ाज़ेन का अर्थ है, बैठना और कुछ न करना। उपासना का भी यही अर्थ है—बैठना और कुछ न करना। कृत्य के कारण ही हमारे चित्त में चिंताएं पैदा हो जाती हैं। कृत्य के कारण ऊहापोह शुरू हो जाता है। कृत्य के कारण तरंगें उठने लगती हैं। और जब कुछ कृत्य नहीं करना है, सब तरंगें शांत हो जाती हैं।

तो उपासना को तुम कृत्य मत मानना, अकृत्य है; चेष्टा मत मानना, चेष्टारहितता है। कुछ पाने की वासना नहीं है उपासना, सिर्फ अपने को हाथ में छोड़ देना है परमात्मा के।

जैसे कोई जल की धार में अपने को छोड़ दे। और जल की धार उसे बहा ले चले। ऐसे जीवन की धार में अपने को छोड़ देने का नाम उपासना है। कुछ कहने की भी बहुत जरूरत नहीं है। कुछ बोलने की भी बहुत जरूरत नहीं है। हां, कभी-कभी बोल सहज उठ जाए तो उठने देना। मगर सहज बोल! और तुम चकित होओगे यह बात जानकर कि जरूरी नहीं है कि सहज बोल में अर्थ हो। कभी-कभी भीतर से हो सकता है सिर्फ नाद उठे। जैसे तुमने शास्त्रीय संगीतज्ञों को कभी आलाप भरते देखा हो ऐसा नाद उठे।

ईसाइयों में एक छोटा-सा संप्रदाय है। उनकी एक प्रक्रिया है—ग्लासोलालिया। बड़ी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। उपासना जिसको समझनी हो उसे ग्लासोलालिया समझनी चाहिए। छोटा-सा त बैठ संप्रदाय, बहुत थोड़े-से लोग उसको मानने वाले हैं। क्योंकि वह बड़ा पागलपन जैसा मालूम पड़ता है। उस संप्रदाय को माननेवाला शांत बैठ जाता है और प्रतीक्षा करता है। फिर भीतर से कुछ आवाज उठनी शुरू होती है—भीतर से, उठता नहीं। ऐसा नहीं है कि तुम उठाओ—राम-राम, राम-राम या ओम्-ओम्, कुछ उठाता नहीं। भीतर से प्रतीक्षा करता है कुछ उठे—आऽऽऽआऽऽऽ, कुछ भी उठे, अनर्गल उठे, उठने देता है, बोलने लगता है। असंगत, अर्थहीन ध्वनियां पैदा होती हैं। पागलपन लगेगा, जो भी दूसरा देखेगा वह कहेगा—यह क्या प्रार्थना हो रही है? तुम पागल हो गए हो? यह हिंदू की प्रार्थना है कि मुसलमान की, कि ईसाई की? यह किसी की भी नहीं है।

मैं इसको देववाणी कहता हूं। यह एक विशेष ध्यान है। और मस्ती छाने लगती है। तुम बोलते नहीं, तुमसे कोई बोलता है। तुम सिर्फ माध्यम बन जाते हो, आदमी डोलने लगता है, मस्ती से भरने लगता है, बड़ी मादकता आ जाती है। घंटों बीत जाते हैं, पता नहीं चलता कि समय कहां गुजर गया। मगर सिर्फ एक हिम्मत उसमें रखनी पड़ती है कि लोग पागल समझेंगे। यह सहज उद्घोष होगा। लोग तो पागल निश्चित समझेंगे। लोग तो समझेंगे दिमाग गया। यह क्या कर रहे हो? मगर अगर तुम एकांत स्थान खोज सको अपने लिए तो मैं तुमसे कहूंगा—यही असली उपासना है।

और तुम चकित हो जाओगे। एक घंटे भर की देववाणी के बाद तुम ऐसे पाओगे जैसे नहाए जन्मों-जन्मों के बाद। ऐसे ताजे हो गए, हल्के हो गए, जैसे उड़ सको, पर लग गए। जैसे जमीन में कोई कोशिश न रही। चलोगे और ऐसा लगेगा कि तुममें कोई भार नहीं। मस्तिष्क एकदम शांत हो जाएगा। शांत ही नहीं, शीतल भी हो जाएगा। एक भीतर शीतलता घनी होगी। तुम पाओगे

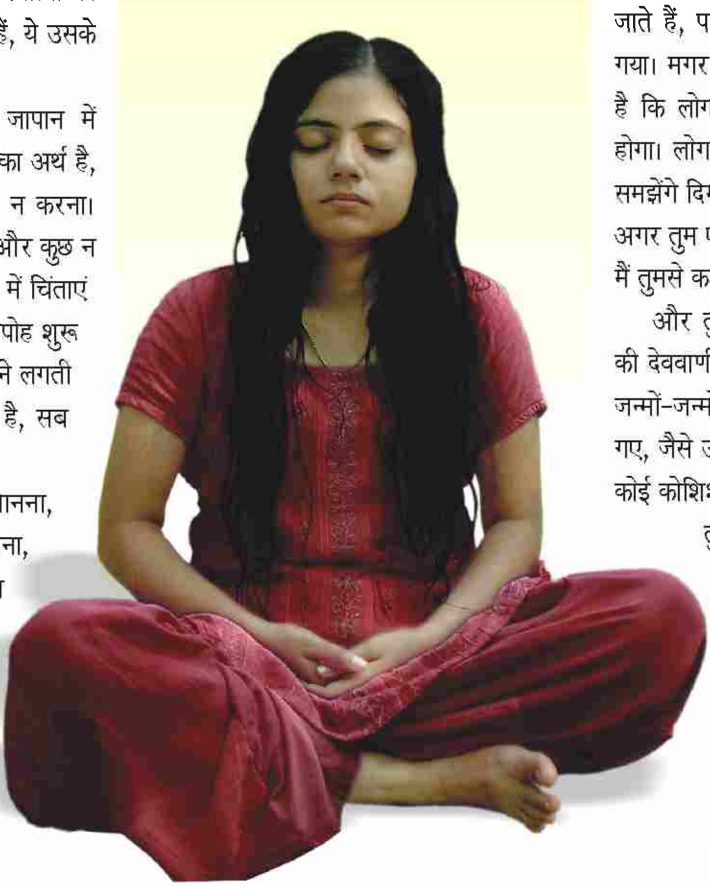

न मालूम कितना बोझ मस्तिष्क से गिर गया। कितनी व्यर्थ की बातें जो सिर में चलती थीं, नहीं चल रही हैं आज। आज भागदौड़ नहीं रहेगी। आज तुम्हारे प्रत्येक कदम में एक शालीनता होगी, एक प्रसाद होगा।

तुम इसे करो और देखो। इसको मैं अनुभव कहता हूं। मैं तुम्हें बता नहीं सकता। जैसे मैंने कहा आऽऽऽआऽऽऽ आ, ऐसा मत करने लगना, कि मैंने कहा आऽऽऽ आऽऽऽ करना है। जो हो, वही होने देना। कभी सार्थक शब्द भी निकल आएगा। कभी निरर्थक शब्द भी आएगा। मगर तुम उसके नियंता मत होना। तुम उसे गहरे अचेतन से उठने देना। पहले तो तुम भी चौंकोगे, जब उठेगा; तुम भी डरोगे, एक भय व्याप्त हो जाएगा कि यह क्या हो रहा है। गए काम से! यह बंद होगा कि नहीं फिर? इसको चलने देना है कि नहीं! यह स्वाभाविक भय है कि यह उठ रहा है, हम तो उठा नहीं रहे, फिर चलता ही रहा कहीं! पत्नी भी आकर सामने खड़ी हो गयी और यह नहीं रुका, फिर क्या करोगे? तो आदमी दबाने की कोशिश करता है। उसके ऊपर बैठ जाना चाहता है दबाकर कि ऐसी झंझट में पड़ना ठीक नहीं है, ये तो बिलकुल शुद्ध विक्षिप्तता है।

तुम अपनी बहुत-सी विक्षिप्तताओं को दबाए बैठे हो। उसी के कारण तुम विक्षिप्त हो, उन्हें निकल जाने दो। उन्हें उड़ जाने दो हवा में। उन्हें मुक्त कर दो। और तुम पाओगे कि तुम्हारे भीतर पहली बार स्वास्थ्य का अनुभव हुआ। एक घंटा अगर कोई सहज उपासना में बैठ जाए; सिर्फ बैठा रहे, कुछ न करे न और जो हो, होने दे।

तो एक तो ग्लासोलालिया महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है उपासना के लिए। दूसरी प्रक्रिया है इंडोनेशिया में—'लातिहान'। वह भी महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। ग्यासोलालिया में ध्वनि को आने देने पर जोर है और लातिहान में मुद्राओं को।

शांत आदमी खड़ा हो जाता है, लातिहान में बैठता नहीं खड़ा होता है, ताकि मुद्रा ठीक से हो सकें। सिर्फ खड़ा रहता है शांत। छोड़ देता है अपने को परमात्मा के हाथ में। सब तरफ से शिथिल कर देता है अपने को। कह देता है—जो तेरी मर्जी हो, कर ले! अचानक पाता है कि एक हाथ ऊपर उठा...अपना ही हाथ ऊपर उठते देखना—बिना उठाए—घबड़ाने वाला है... मुद्रा बनने लगी, या शरीर डोलने लगा। जैसे बीन बजने लगी और सांप नाचने लगा। नाच पैदा हो जाता है, मुद्राएं बनती हैं, सिर घूमने लगता है, आदमी चक्कर खाने लगता है—कुछ भी हो सकता है, सब कुछ संभव है। कूदने लगता है, फांदने लगता है, या कभी कुछ भी न हो; शांत ही खड़ा रहे, कुछ भी न हो, वह भी हो सकता है।

एक घंटे भर का लातिहान और तुम पाओगे जैसे सारे शरीर में जहां-जहां ऊर्जा में अवरोध थे, सब पिघल कर बह गए। एक घंटे भर बाद तुम पाओगे तुम्हारा शरीर ठोस नहीं, तरल है। एक अद्‌भुत नृत्य से तुम गुजर गए। मगर इसमें भी लोग तुम्हें पागल समझेंगे कि यह क्या हो रहा है।

इसीलिए तो जो प्रयोग यहां चल रहे हैं, उनको जो लोग बाहर से देखने आ जाते हैं वे समझते हैं कि सब पागलपन हो रहा है; यह क्या हो रहा है? यह कैसा ध्यान? यह कैसी पूजा, यह कैसी प्रार्थना? क्योंकि उनके पास बंधे ढांचे हैं। वे उन्हीं ढांचों को सोचकर आए हैं कि कुछ ऐसा हो रहा होगा; कि बाबा मुर्दानंद बैठे होंगे और अपनी माला फेर रहे होंगे। यहां कोई बाबा मुर्दानंद नहीं हैं। यहां जीवन है, अपनी पूरी तरंग में, अपनी पूरी मस्ती में, अपने पूरे आह्लाद में। लोग यहां सोच कर आ जाते हैं कि लोग बैठे होंगे बिलकुल अपने झाड़ों के नीचे, सूख-साखे, जिनसे जीवन जा चुका है, झरने सूख गए हैं। ऐसे लोगों को लोग महात्मा कहते हैं। और जब इन महात्माओं के चेहरे बिलकुल पीले पड़ जाते हैं, पीतल जैसे हो जाते हैं, तो वे कहते हैं—देखो कैसी स्वर्ण जैसी आभा प्रगट हो रही है! जब ये महात्मा बिलकुल सूख कर हड्डी-हड्डी हो जाते हैं, वे कहते हैं—यह त्याग, तपश्चर्या! यह है महिमा!

तुम खुद भी मूढ़ हो, तुम्हारी मूढ़ता के कारण तुम्हारे महात्मा भी मूढ़ हैं। तुम्हारे पीछे चल रहे हैं। तुम जिस बात की प्रशंसा करते हो, वही करने लग जाते हैं।

यहां हम किसी की धारणाएं तृप्त करने को नहीं हैं। यहां तो हम जीवन के प्रयोग कर रहे हैं। यहां तो जो सहज नैसर्गिक है, उसको सुविधा दे रहे हैं कि प्रगट हो।

उपासना का मेरे लिए यही अर्थ है—जो हो होने देना, तुम तरल हो जाना। तुम कठपुतली हो जाना। और सब धागे उसके हाथ में छोड़ देना। वह नचाए तो नाचना, वह रुलाए तो रोना, वह गवाए तो गाना, वह जो करवाए सो करना। और वह कुछ न करवाए, बिलकुल बुत बनाकर बिठाल दे तो बुत बने बैठे रहना। अपनी तरफ से न करना, इसे मैं दोहराता हूं फिर-फिर, अपनी तरफ से कुछ भी न करना। क्योंकि तुम इतने धोखेबाज हो कि तुम यह सब काम अपनी तरफ से कर सकते हो।

लातिहान में किसी के हाथ-पांव में मुद्राएं आ रही हैं, अब तुम खड़े देख रहे हो, तुम सोचते हो कि यह मामला क्या है, हम क्यों खड़े हैं? सब को कुछ-न-कुछ हो रहा है, कोई क्या कहेगा कि इन्हें कुछ भी नहीं हो रहा, तुम भी अपने हाथ-पैर हिलाने लगे, मटकाने लगे; बस तुम चूक गए। सबके भीतर से ध्वनियां उठ रही हैं, तुमने देखा कि हम चुप बैठे हैं तो बुद्धू मालूम होते हैं, अब जब पागलों के साथ हो गए हैं तो पागल ही हो जाने में सार है, तुम भी उठाने लगे ध्वनि; तुम चूक गए। और बाहर से देखने वालों को दोनों बातें एक-सी मालूम पड़ेंगी, क्योंकि बाहर से कोई भेद नहीं किया जा सकता। कौन अभिनय कर रहा है, कौन अनुभव कर रहा है, इसका बाहर से कुछ भेद नहीं किया जा सकता। मगर तुम्हें अपने भीतर तो साफ पता चलता रहेगा कि यह अनुभव है या अभिनय। अगर अभिनय है, तत्क्षण छोड़ दो। अभिनय से कोई परमात्मा तक न पहुंचा है, न पहुंच सकता है। अनुभव से पहुंचता है।

— ओशो

समाधि की सुराही

प्रिय ओशो को नमन् Ayur Herbal Collection